डेरी समाचार

राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल (भा. कृ. अनु. परि.) की त्रैमासिक विस्तार पत्रिका

वर्ष 44 | जनवरी – मार्च 2014 | अंक – 1

संस्थान समाचार

राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान शिक्षा नेतृत्व पुरस्कार 2013 से सम्मानित

राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान एक प्रतिष्ठित एवं अग्रगण्य अनुसंधान संस्थान है जो कि देश में डेरी विकास कार्यक्रमों के लिये अनुसंधान एवं मानव संसाधन विकास में सहयोग के लिये पूर्ण रूप से समर्पित रहा है। इस संस्थान को मान्य विश्वविद्यालय की प्रतिष्ठा प्राप्त है। दिनांक 23 अक्टूबर 2013को आयोजित देवांग मेहता बिजनिस स्कूल पुरस्कार समारोह के

अवसर पर इस संस्थान को भारत के शिक्षण संस्थानों में विशिष्ट मान्यता और नेतृत्व के लिये शिक्षा नेतृत्व पुरस्कार 2013 से सम्मानित किया गया।

डेरी शिक्षा कृषकों के द्वार (प्रसार कार्यकलाप)

राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान के निदेशक डा. अनिल कुमार श्रीवास्तव की प्रेरणा एवं निर्देशन में वर्ष 2009 से कृषकों, पशुपालकों के हितार्थ डेरी शिक्षा कृषकों के द्वार कार्यक्रम डेरी विस्तार विभाग द्वारा चलाया जा रहा है जिसके अन्तर्गत संस्थान के विषय विशेषज्ञ वैज्ञानिकों की टीम हर माह के द्वितीय शनिवार को समीपस्थ गाँव में कृषकों के द्वार तक पहुँचकर उन्नत डेरी फार्मिंग के बारे में पशुपालकों में जागरूकता लाते हैं। इस दौरान, गांव के पशुपालक वैज्ञानिकों से सीधे सम्पर्क करके पशुप्रजनन, पोषण स्वास्थ्य एवं दुग्ध उत्पादन से सम्बन्धित नयी जानकारी तथा अपनी समस्याओं का समाधान प्राप्त कर सकते हैं। इसी क्रम में विगत दिसम्बर माह में गाँव, वजीदपुर में डा. गोपाल सांखला, डेरी विस्तार विभाग एवं अन्य वैज्ञानिक डा. एम.एस. चौहान, डा. चन्देल, डा. राजीव कपिला, डा. मन्जु आशुतोष एवं डा. आर.के. पुंडीर की टीम वजीदपुर में पहुँची और पशुपालकों को पशु स्वास्थ्य रक्षा से सम्बन्धित विविध पहलुओं पर जानकारी दी।

ग्रामीण महिला सशक्तिकरण के लिये आयोजित प्रशिक्षण कार्यक्रम सम्पन्न

राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान करनाल के डेरी विस्तार प्रभाग द्वारा दिनांक 18 से 20 दिसम्बर 2013 को ग्रामीण महिलाओं के लिये तीन दिवसीय प्रशिक्षण कार्यक्रम का आयोजन किया गया। इस प्रशिक्षण के दौरान संस्थान में स्वयं सहायता समूह गांव वजीदपुर की महिलायें आई ।

उन्हें वसा परीक्षण, क्रीम, मक्खन और घी बनाने का प्रशिक्षण प्रदान किया

सम्पादकीय

नववर्ष 2014 ने दस्तक दे दी है। आइये हम सब मिलकर नववर्ष का अभिनंदन करें। हमारे संस्थान का सम्पूर्ण परिवार डेरी समाचार के पाठकों, कृषकों, डेरी पशुपालकों, डेरी उद्यम कर्ताओं एवं उनके परिवार के सुखद भविष्य की मंगल कामना करता है। हमारी शुभेच्छा है कि आप के खेत खलिहान और पशुधन में निरन्तर बढ़ोत्तरी हो। दूध की नदियाँ बहने की कल्पना साकार हो। इस वर्ष के दिन का हर सवेरा आपके लियेआशा, उत्साह और सुख समृद्धि लेकर आऐ।

डेरी समाचार के पाठकों के पत्र हमें निरन्तर मिलते रहते हैं, हम उनके आभारी हैं। पत्रों के माध्यम से हमें पता चलता रहता है कि हम संस्थान द्वारा विकसित डेरी तकनिकियों एवं पशुपालन से जुड़ी विविध जानकारी आप तक पहुँचाने के प्रयासों में सार्थक रहे हैं। साथ ही भविष्य में भी हम पाठकों की प्रतिक्रिया जानने के इच्छुक रहेगें। जिससे आपकी आवश्यकता के अनुकूल पाठ्य सामग्री को आप तक पहुँचा सकें। प्रसन्नता का विषय है कि डेरी समाचार ने अपने जीवन के 43 वर्ष पूरे कर लिये है। यह पत्र एक लम्बे समय से आपके और इस संस्थान के बीच कड़ी का काम कर रहा है।

पत्र के माध्यम से डेरी विज्ञान से जुड़े समस्त पहलुओं पर जानकारी आप तक पहुँचाने का हमारा प्रयास रहता है। किसी भी तकनीक की सफलता भी पशुपालकों द्वारा व्यापक रूप से अपनायें जाने पर निर्भर है।

यह सौभाग्य का विषय है कि भारत दुग्ध उत्पादन के क्षेत्र में विश्व के प्रथम दुग्ध उत्पादक देश के रूप में प्रतिष्ठित हो गया है जिसका श्रेय हमारे पशुपालकों को ज्यादा जाता है। भारत का दुग्ध उत्पादन 129.9 मैट्रिक टन है, परन्तु बढ़ती जनसंख्या और दुग्ध एवं दुग्ध उत्पादों के प्रति लोगों के आकर्षण, खाद्य तथा आजीविका के साधन जुटाने के लिये पशुपालन व्यवसाय को व्यापक रूप से बढ़ाने की आवश्यकता है। पशुपालक भाई इसको एक स्वतंत्र व्यवसाय के रूप में अपनाकर इससे आजीविका के विविध स्त्रोत जुटा सकते हैं।

गया। साथ ही इस प्रशिक्षण के दौरान गुलाब जामुन, पनीर, खोया, छेना मुरकी और कलाकंद बनाने की विधि उन्हें सिखाई गई जिससे कि वे दुग्ध उत्पाद बनाने में निपुण हो सकें और अपनी आजीविका जुटाने तथा आय बढ़ाने तथा अपने घर परिवार के पोषण सुरक्षा में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकें। प्रशिक्षण आयोजन के समापन अवसर पर डा. जी. आर. पाटिल, संयुक्त निदेशक (शिक्षण) ने पधार कर महिलाओं का उत्साह वर्धन किया। डा पुन्नू शामी, अध्यक्ष, डेरी विस्तार की प्रेरणा से श्रीमती प्रविन्द्र शर्मा एवं अन्य सहयोगियों द्वारा यह कार्यक्रम आयोजित किया गया।

अपने पशु की नस्ल को पहचानें

अर्चना वर्मा, कृष्णेन्द्र दिनेश, ईश्वर दयाल गुप्ता, अवतार सिंह एवं आर. एस. गाँधी

	देवनी गाय	ओन्गोल गाय	मेहसाना भैंस
		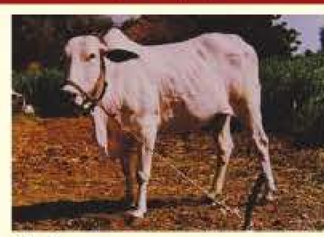	
अन्य नाम		नैल्लोर	मेहसानी
उपयोगिता	दूध एवं भार वाहन	दूध व भारवाहन	दूध व भार वाहन
उद्‌गम एवं उपलब्धता	महाराष्ट्र का मराठ वाड़ा क्षेत्र तथा इसके सीमावर्ती कर्नाटक व आंध्रप्रदेश का क्षेत्र	आन्ध्र प्रदेश के तटवर्तीय क्षेत्र, नेल्लोर, गुन्टुर, कृष्णा व गोदावरी जिले।	गुजरात: महसाना, साबरकांठा, बनासकांठा, खेड़ा बड़ोदा
विशेषता	• शांत प्रवृति • अच्छा दुग्ध उत्पादन • बैल-भारी कार्य हेतु	• भारी पशु • बैल भार वाहन हेतु	(मुर्राह व सुरती के संकर से उत्पन्न) • कम आयु में वयस्कता प्राप्ति • दुग्ध उत्पादन स्थायित्व
रंग	सफेद (यदा कदा काले धब्बे) मुँह काला व सफेद	सफेद, सिर, गर्दन घुटनों व कूब पर गहरे सलेटी निशान बछड़े कभी-कभी गहरे लाल-भूरे होते हैं, जो 6 महीने-1 साल तक सफेद/भूरे में बदल जाता है।	काला, काला-भूरा, मुँह, पैरों व पूंछ पर सफेद निशान
शारीरिक अभिलक्षण	माथा उभरा हुआ सींग: मध्यम आकार कॉलर : मध्यम आकार थन : मध्यम विकसित कान : हल्के भूरे रंग के	सींग : छोटे, कॉलर : लम्बी व मांसल थन: विकसित, त्वचा : चिकनी, नर्म व ढ़ीली कान: खड़े	सींग: दारांती के आकार के आकार मध्यम, पूंछ: लम्बी, थन: पूर्ण विकसित आंखें : काली व चमकदार

औसत शारीरिक भार (कि.ग्रा.)	नरः 560 मादा : 400	नरः 600 मादा : 430	नरः 650 मादा : 480
औसत दुग्ध उत्पादन (कि.ग्रा.)	1100 (636 – 1890)	688 (475 – 1000)	1988 (598 – 3597)
प्रथम ब्याँत आयु (दिन)	1400 (894 – 1540)	1473 (1150 – 1820)	1287 (671 – 1680)
ब्यांत अंतराल (दिन)	465 (395 – 517)	500 (420 – 720)	475 (313 – 945)
औसत वसा (%)	4.3	4.5 (4.2 – 5.1)	7.4 (5.2 – 9.5)

"हरे चारे के लिए मक्का – लोबिया की बुवाई करें"

उत्तम कुमार एवं राकेश कुमार

हमारा देश एक कृषि प्रधान देश है। यहाँ पर अधिकतर मिली जुली खेती की जाती है। यहाँ पर किसान, अनाज की फसलों के अलावा थोड़ा बहुत हरा चारा भी उगा लेते हैं। हमारें देश में पशुओं की संख्या दूसरे देशों की अपेक्षा बहुत अधिक है, लेकिन भारत वर्ष में खेती योग्य कुल भूमि के लगभग 4 प्रतिशत क्षेत्रफल पर ही चारा उगाया जाता है। एक तरफ तो हरे चारे की कमी है, वहीं दूसरी तरफ पशुओं को दिये जाने वाले दानें और चूरी की कीमतें बढ़ती जा रही हैं। इसलिए किसानों के सामने एक अच्छा विकल्प है कि वह उन्नत सस्य विधियां अपनाकर हरे चारे की पैदावार प्रति हैक्टेयर बढ़ाये और पशुओं को खिलाएं जाने वाले दानों पर खर्च कम करें।

जिस प्रकार अन्न की उन्नत प्रजातियों से अधिक पैदावार लेने के लिए संतुलित मात्रा में खाद एवं उर्वरक की आवश्यकता पड़ती है, उसी प्रकार दुधारू जानवरों विशेषकर संकर नस्ल की गायों को भी संतुलित मात्रा में भोजन की आवश्यकता पड़ती है। परीक्षणों द्वारा देखा गया है कि गर्मी के महीने में हरा चारा खिलाने से गाय और भैंस का दूध 25% तक बढ़ जाता है।

अप्रैल तक तो बरसीम, जई, रिजके का हरा चारा मिल जाता है लेकिन मई और जून में हरे चारे की उपलब्धता कम हो जाती है। इसलिए इस मौसम में हरे चारे की उपलबद्यता बहुत जरूरी है। फरवरी में आलू की खुदाई और मार्च में सरसों की कटाई के बाद खेत खाली हो जाते हैं। इसलिए फरवरी – मार्च में हरे चारे की बुवाई कर दी जाए तो मई, जून में पशुओं को हरा चारा उपलब्ध कराया जा सकता है। अब प्रश्न यह है कि इस मौसम में अगेती चारे की फसलों में मक्का और लोबिया प्रमुख है। इन फसलों की अधिकतम पैदावार लेने के लिए निम्नलिखित उन्नत सस्य विधियां अपनायें।

किस्मों का चुनाव – किसी भी फसल की अधिकतम उपज लेने के लिए उन्नत किस्मों का चुनाव अति आवश्यक है। अधिक पैदावार देने के साथ ही ऐसी फसलों को उगाते हैं जो कीड़े और बीमारी की प्रति रोधी और क्षेत्र विशेष के लिए अनुकूल हों। मक्का की अच्छी पैदावार के लिए वैसे तो कोई भी संकर किस्म लगा सकते हैं परन्तु उत्तरी भारत के मैदानी इलाकों के लिए फरवरी मार्च में बोई जाने वाली किस्मों में अफ्रीकन टाल मक्का की उत्तम किस्म है। लोबिया की किस्मों में एशियन जॉयन्ट, ई.सी 4216, सीन 152 एवं उ0 प्र0 लोबिया 5286 अच्छी किस्में है। बीज हमेशा अच्छी संस्था से ही खरीदें।

बीज उपचार – लोबिया दाल वाली फसल है। इसलिए बुवाई से पहले बीज को राइजोबियम कल्चर से उपचारित करना चाहिए, राइजोबियम कल्चर से उपचारित किये गये बीज के पौधों की जड़ों में भूमि में नाइट्रोजन जमा करने वाली ग्रन्थियां अधिक बनती है। इससे फसल की अच्छी पैदावार मिलती है।

बुवाई – गर्मियों में बुवाई के लिए उचित नमी का होना बहुत जरूरी है। पलेवा के बाद एक या दो जुताई करके खेत तैयार कर लिया जाता है। फसलों की बुवाई हमेशा कतारों में करनी चाहिए। कतार से कतार की दूरी 25 - 30 सें.मी और बीज की गहराई 5 - 6 सें.मी. रखनी चाहिए। खेत खाली होने के अनुसार बुवाई 15 फरवरी से मार्च के अन्तिम सप्ताह तक लेनी चाहिए। यदि बीज का अंकुरण सही है तो मक्का और लोबिया को अलग - अलग बोने पर 40 - 50 किलोग्राम बीज प्रति हैक्टेयर की आवश्यकता होती है। यदि दोनो फसलों को मिलवाँ फसल के रूप में बोया जाता हैं तो 30 किग्रा. लोबिया एवं 35 किग्रा. मक्का का बीज पर्याप्त होता है।

उर्वरक – उर्वरक हमेशा मिट्टी जांच के बाद ही देना चाहिए। लोबिया को दाल वाली फसल होने के कारण अधिक नाइट्रोजन की आवश्यकता नहीं पड़ती । इसलिए इसमें 20 किग्रा नाइट्रोजन एवं 30 - 35 कि.ग्रा. फास्फोरस तत्वों की मात्रा प्रति हेक्टेयर देने की जरूरत होती है। तत्वों की पूरी मात्रा बुवाई के समय मिट्टी में मिला देनी चाहिए।

मक्का की फसल को अधिक मात्रा में नाइट्रोजन देने की आवश्यकता होती है क्योंकि मक्का घास कुल की फसल है। मक्का से अधिक चारा लेने के लिए 60 - 70 किग्रा नाइट्रोजन एवं 30 - 35 कि.ग्रा. फास्फोरस प्रति हेक्टेयर पर्याप्त होता है। यदि आलू की खुदाई के बाद फसल बोई है तो उर्वरक की मात्रा कम कर देते हैं। फास्फोरस की पूरी व नाइट्रोजन की आधी मात्रा बुवाई के समय डालते हैं। नाइट्रोजन की आधी मात्रा 20 - 25 दिन बाद पहली सिंचाई से पहले डालकर सिंचाई करते हैं।

सिंचाई – गर्मी की फसल होने के कारण सिंचाई का समय पर ध्यान देना बहुत महत्वपूर्ण है। पहली सिंचाई बुवाई के 20 - 25 दिन बाद जरूर कर देनी चाहिए ताकि जो बीज नमी की कमी के कारण जम नहीं पाया वो सिंचाई करने से जम जाता है। हमेशा पहली सिंचाई हल्की करनी चाहिए। दूसरी एवं तीसरी सिंचाई 15 दिन के अन्तराल पर करनी चाहिए। इससे चारा भरपूर मात्रा में पैदा होता है।

कटाई एवं उपज – चारे के लिए दोनों फसलें 60 - 65 दिन में कटाई के लिए तैयार हो जाती हैं। दलहनी एवं गैर दलहनी अर्थात् घास कुल की फसलों को मिलाकर बोया जाना चाहिए तथा कटाई भी साथ - साथ करनी

चाहिए। ऐसा करने से प्रोटीन एवं कार्बोहाइड्रेट की उचित मात्रा मिलने से पशुओं को अधिक पौष्टिक एवं स्वादिष्ट हरा चारा मिलता है तथा दूध की मात्रा भी बढ़ती है। मक्का एवं लोबिया की मिलवा खेती करने से लगभग 400 कुन्तल हरा चारा प्रति हैक्टेयर प्राप्त हो जाता है।

गोबर की खाद का महत्व

प्रमोद कुमार

प्राचीन युग से ही ''खाद'' का पौधों, फसल उत्पादन में महत्वपूर्ण स्थान रहा है। खाद शब्द की उत्पत्ति संस्कृत के 'खाद्य' शब्द से हुई है।

खाद की परिभाषा ''जल के अतिरिक्त वे सब पदार्थ जो मिट्टी में मिलाये जाने पर उसकी उर्वरता में सुधार करते हैं'' खाद कहलाते हैं।

खाद देने के उद्देश्य :

1. संतुलित पोषक तत्व उपलब्ध कराना – पौधों को अधिक से अधिक एवं संतुलित मात्रा में सभी आवश्यक तत्वों की उपलब्धि कराना।
2. फसलों से अधिक लाभ प्राप्त करना – भूमि में बार बार फसलोत्पादन से मिट्टी व गमलों में उपस्थित मिट्टी के पोषक तत्व, पौधों व फसलों के रूप में काट दिये जाते हैं।

अत: धीरे धीरे गमलों व मिट्टी में पोषक तत्वों का भण्डार नष्ट होता रहता है जो बाहर से खाद के रूप में पोषक तत्व मिलाकर पूरा करते हैं। गमलों व भूमि में अधिक उपज देने वाली फसलों की जातियाँ उगाने से मुख्य तत्व नाइट्रोजन, फास्फोरस व पोटाश गमलों व मिट्टी में मिलाये जाते हैं।

3. भौतिक दशा में सुधार – खाद मिट्टी की भौतिक दशा में सुधार करके भूमि में पोषक तत्वों की उपलब्धि बढ़ाकर उसकी शक्ति में वृद्धि करती है।

गोबर खाद की रासायनिक रचना एवं संघटन :

पशुओं के ताजे गोबर की रासायनिक रचना जानने के लिये, गोबर को ठोस व द्रव को दो भागों में बाँटते हैं। भार के दृष्टिकोण से ठोस भाग 75 प्रतिशत तक पाया जाता है। सारा फास्फोरस ठोस भाग में ही होता है तथा नत्रजन व पोटाश, ठोस द्रव भाग में आधे – आधे पाये जाते हैं।

गोबर खाद की रचना अस्थिर होती है। किन्तु इसमें आवश्यक तत्वों का मिश्रण निम्न प्रकार है।

1. नाईट्रोजन 0.5 से 0.6 प्रतिशत
2. फॉस्फोरस 0.25 से 0.3 प्रतिशत
3. पोटाश 0.5 से 1.0 प्रतिशत

गोबर की खाद में उपस्थित 50 प्रतिशत नाईट्रोजन, 20 प्रतिशत फॉस्फोरस व पोटेशियम पौधों को शीघ्र प्राप्त हो जाता है। इसके अतिरिक्त गोबर की खाद में सभी तत्व जैसे कैल्शियम, मैगनीशियम, गन्धक, लोहा, मैग्नीज़, तांबा व जस्ता आदि तत्व सूक्ष्म मात्रा में पाये जाते हैं।

गोबर की खाद का गमलों व भूमि पर लाभ दायक प्रभाव :

1. **मिट्टी में भौतिक सुधार :**
   - मिट्टी में वायु संचार बढ़ता है।
   - मिट्टी में जलधारण व जल सोखने की क्षमता बढ़ती है।
   - मिट्टी में ताप का स्तर सुधरता है।
   - पौधों की जड़ों का विकास अच्छा होता है।
   - मिट्टी के कण एक – दूसरे से चिपकते हैं। मिट्टी का कटाव कम होता है।
   - भारी चिकनी मिट्टी तथा हल्की रेतीली मिट्टी की संरचना का सुधार होता है।
2. **मिट्टी के रासायनिक गुणों पर प्रभाव :**
   - पौधों को पोषक तत्व अधिक मात्रा में मिलते हैं।
   - मिट्टी में कार्बोनिक पदार्थ की मात्रा बढ़ती है।
   - मिट्टी की क्षार विनिमय क्षमता बढ़ जाती है।
   - मिट्टी में पाये जाने वाले अनुपलब्ध पोषण तत्व, उपलब्ध पोषक तत्वों की उपलब्धता बढ़ती है।
   - पोटैशियम व फॉस्फोरस सुपाच्य सरल यौगिकों में आ जाते हैं।
   - पौधों की कैल्शियम, मैग्निशियम, मैगनीज़ व सूक्ष्म तत्वों की उपलब्धता बढ़ती है।
   - कार्बनिक पदार्थ के विच्छेदन से कार्बन डाई – आक्साईड मिलती है। यह अनेक घुलनशील कार्बोनेट व बाईकार्बोनेट बनाती है।
3. **मिट्टी के जैविक गुणों पर प्रभाव :**
   - मिट्टी में लाभदायक जीवाणुओं की संख्या बढ़ती है।
   - लाभदायक जीवाणुओं की क्रियाशीलता भी बढ़ती है।
   - अनेक जीवाणु मिट्टी से पोषक तत्व लेकर पौधों को प्रदान करते हैं।
   - जीवाणुओं द्वारा वातावरण की नाईट्रोजन का स्थिरीकरण अधिक होता है।
   - जीवाणु जटिल नाईट्रोजन को अमोनिया नाईट्रेट आयन्स में बदलते है। नाईट्रोजन का यही रूप पौधों द्वारा ग्रहण किया जाता है।

गोबर खाद प्रयोग करने की विधि :

गोबर की खाद को गमलों व खेत में किस विधि से डालें, यह कई बातों जैसे खाद की मात्रा, खाद की प्रकृति, मिट्टी की किस्म व फसल के प्रकार पर निर्भर करता है।

गोबर की खाद डालने का समय :

गोबर की सड़ी हुई खाद को ही सदैव फसल बोने अथवा गमलों में पौधों को लगाने के लिये ही प्रयोग करें। फसलों में बुवाई से पूर्व खेत की तैयारी के समय व गमलों को मिट्टी भरते समय अच्छी तरह मिट्टी में मिलाकर पौधे रोपने से एक सप्ताह पूर्व भरें।

भारी चिकनी मिट्टी में ताजा गोबर की खाद बुआई से काफी समय पूर्व प्रयोग करना अच्छा होता है क्योंकि विच्छेदित खाद से मिट्टी में वायु संचार बढ़ जाता है। जलधारण क्षमता भी सुधरती है। हल्की रेतीली मिट्टी एवं पर्वतीय मिट्टी में वर्षाकाल के समय को छोड़कर करें।

गोबर खाद की मात्रा :

गोबर की खाद खेत में मोटी परत की अपेक्षा पतली परत डालना सदैव अच्छा रहता है। लम्बे समय की फसल में समय-2 पर खाद की थोड़ी मात्रा देना, एक बार अधिक खाद देने की अपेक्षा अधिक लाभप्रद होता है। सभी फसलों में 20-25 टन प्रति हैक्टेयर एक-एक में 10 टन, गोबर की खाद खेत में दी जाती है। सब्जियों के खेत में 50-100 टन प्रति हैक्टेयर व गमलों में साईज व मिट्टी के अनुसार 200 से 600 ग्राम बड़े गमलों में 1 कि.ग्रा. से 1.5 कि.ग्रा. तक प्रति गमला साल में 2-3 बार डालें।

अधिक जानकारी के लिए सम्पर्क करें -कृषि प्रौद्योगिकी सूचना केन्द्र, रा.डे.अ.सं. करनाल (हरियाणा) टोल फ्री फोन : 18001801199

सहकारिता: संस्कृति एवं मान्यताएँ

ऋतु चकवर्ती

अमेरिका के चौंतीसवें राष्ट्रपति एसिनहोवर ने कहा है कि '' केवल शक्ति ही सहकारिता कर सकती है - कमजोरी केवल भीख मांग सकती है।'' इन महत्वपूर्ण शब्दों में बहुत सत्य है, क्योंकि सहकारिता की शक्ति से ही हमारे किसान भाई-बहन सशक्त हो सकते हैं।

सहकारिता एक मान्यताओं पर आधारित समाजिक व आर्थिक प्रणाली है। हर आदमी जो इससे जुड़ता है, उसको सशक्त बनाने की क्षमता रखती है - न केवल आर्थिक रूप से बल्कि, सामाजिक व मांनसिक तौर पर भी। सन् 2012 को, सहकारिता के अन्तराष्ट्रीय वर्ष के रूप में मनाया गया। इस अवसर पर भारत के भूतपूर्व राष्ट्रपति डा. ए. पी. जे अब्दुल कलाम ने अपने विचार व्यक्त करते हुए कहा था कि भारत में एक ऐसा सहकारिता का माड़ल स्थापित होना चाहिए, जो एक ऐसे समाज को तैयार कर सके जो आर्थिक रूप से सक्षम हो, भारतीय संस्कृति पर गर्व करने वाला तथा आधुनिक शिक्षा प्रणाली पर आधारित और प्रत्येक मनुष्य मुख्यत: बहनों को सशक्त करने वाला हो।

हर सहकारी समूह कुछ सिद्धांतों पर आधारित होते हैं। ये सिद्धांत हर राष्ट्र में माने जाते हैं। जैसे स्वैच्छिक खुली सदस्यता, लोकतान्त्रिक सदस्यता नियंत्रण, सदस्यों की आर्थिक सहभागिता शक्ति एवं स्वतंत्रता, शिक्षा, प्रशिक्षण व सूचना सहकारी समूहों की सहकारिता तथा पूरे सम्प्रदाय के प्रति सहानुभुति लेकिन अगर आप सही मायने में चाहते हैं कि सहकारी संगठन महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाए, तो कुछ अन्य बातों पर भी गौर करना पड़ेगा, जैसे: -

1. पहले तो यह देखना चाहिए कि क्या हम सही रूप में सहकारिता को समझते हैं ? ये कौनसी सामाजिक या आर्थिक जरूरत को पूरा करता है?
2. सहकारिता पर, आपका पूर्ण भरोसा होना चाहिए।
3. सहकारी समूह तो बन जाते हैं, लेकिन सहकारिता लाने में समय व परिश्रम लगता है। प्रयत्न हर सदस्य को करना पड़ता है।
4. सहकारिता का मूल्याँकन अनिवार्य है - न केवल आर्थिक तौर पर समाजिक व मानसिक प्रभाव का मूल्याँकन जरूरी है। यह सहकारिता के लिए जरूरी है।
5. अगर अच्छी सहकारिता संस्कृति आपके कोओप्रेटिव में है - तो बहुत अच्छी बात है - लेकिन, इसको बनाए रखना भी बहुत जरूरी है - इसके लिए प्रयत्नशील रहना चाहिए।
6. हर सहकारी समूह, जो अपनी सफलता पर गर्व करना चाहता है - उन्हें देखना पड़ेगा कि वे सहकारिता की मान्यताओं को सही रूप में मान रहे है या नहीं। उनकी वार्षिक बैठको में, चुनावों में, पारदर्शिता है - या नहीं।
7. एक और बात जो बहुत जरूरी है - क्या हमारे सहकारी संघ में सम्मुत्थान शीलता है? अर्थात उसमें इतनी क्षमता हो कि वो अपने मूल उद्देश्य को, हर परिस्थिति में कायम रख सकें। उसे सामाजिक तौर पर सम्मुत्थानशील होना चाहिए। इन सब बातों से, एक कोऔप्रेटिव आम आदमियों द्वारा खास काम करवाने में सक्षम हो जाता है।

जहाँ तक डेरी सहकारी संगठन की बात है, आप जानते है, कि भारत में 80 प्रतिशत दूध - असंगठित क्षेत्र द्वारा संचालित होता है, और केवल 20 प्रतिशत संगठित क्षेत्र द्वारा संचालित किया जाता है। डेरी सहकारिता बहुत महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं - ग्रामीण क्षेत्र में दूध उत्पादन बढ़ा कर और निर्धनता दूर करने में। भारत में, विश्व की सबसे अधिक गाय व भैंसे हैं। सड़सठ प्रतिशत से ज्यादा डेरी पशु, सीमांत व छोटे किसानों के पास है। 30 प्रतिशत से अधिक दूध जो भारत में उत्पादित होता है, वो किसान के घर पर ही रखा जाता है। केवल 20 प्रतिशत दूध संगठित क्षेत्र यानि सरकार व सहकारी संगठन द्वारा विक्रय होता है। हाँलाकि संगठन क्षेत्र पशु पालक को लाभकारी मूल्य देता है, फिर भी, असंगठित क्षेत्र महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है - दूध की मार्केटिंग में। इसके कुछ कारण है जैसे सहकारिता वसा मात्रा पर दूध की कीमत निर्धारित करती है, प्राइवेट सैक्टर - रोज के रोज कीमत भुगतान कर देता है। दूध उत्पादक को सहकारिता सैक्टर की प्रसंस्करण क्षमता 33 प्रतिशत है। जबकि केवल 20 प्रतिशत दूध का संचालन करता है। दूध व दुग्ध पदार्थ अब, भारत की ''फूड बास्केट'' में भी शामिल किए गए है।

दूध उत्पादको को आकर्षित करने के लिए सहकारी क्षेत्रों को और ऐसी स्कीमें व सेवाएँ प्रदान करनी पड़ेगी जो पशु पालकों को लाभ दे सकें और सहकारिता से जुड़ने के लिए प्रेरित कर सकें।

ब्याँने से पूर्व एवं इसके बाद गायों को क्या खिलाएं

अश्विनी कुमार रॉय एवं महेंद्र सिंह

प्रसव से तीन सप्ताह पूर्व एवं तीन सप्ताह बाद का समय संक्रमण-काल कहलाता है। गर्भावधि, दुग्ध, उत्पादन एवं प्रसव क्रिया जैसे सभी कारक मिलकर गाय के चयापचय को प्रभावित करते हैं। संक्रमण काल के दौरान शरीर में प्रसव एवं दुग्ध-उत्पादन सम्बन्धी कई प्रकार के परिवर्तन होते हैं। जो उत्तकों के निर्माण एवं आहार उपयोगिता को प्रभावित करते हैं। यद्यपि शरीर में दुग्ध संश्लेषण एवं बच्चे की बढ़त के कारण पोषक तत्वों की माँग बढ़ रही होती है, तथापि अपेक्षकृत कम आहार ग्राह्यता के कारण गाय कमजोर होने लगती है। संक्रमण काल में गायों के आहार पर समुचित ध्यान नहीं दिया जाता है। अत: इस अवधि में पोषक तत्वों की बढ़ती हुई माँग को देखते हुए गायों को अधिक पोषक तत्व उपलब्ध करवाने की आवश्यकता पड़ती है।

प्रसवोपरांत ऋणात्मक ऊर्जा असंतुलन के कारण पाचन नली में भोज्य पदार्थ बहुत धीमी गति से चलते हैं जिससे रूमेन में किण्वन अधिक होता है। इस अवस्था में वाष्पित होने वाले वसीय अम्लों की मात्रा अधिक बनने से चयापचप सम्बन्धी विकार जैसे चर्बी-युक्त जिगर, कीटोसिस, एसिडोसिस तथा खनिजों का संतुलन बिगड़ने से दुग्ध ज्वर, एनीमा व अधिक कैल्शियम के कारण होने वाली गंभीर समस्याएँ आ सकती हैं। ऐसे पशुओं में जेर न गिराना, गर्भाश्य की सूजन तथा थनैला रोग होने की संभावना भी अधिक प्रबल होती है। अत: दुग्ध-संश्लेषण के कारण होने वाले तनाव से मुक्त

होने के लिए प्रसवोपरांत पशुओं के पोषण पर विशेष ध्यान देना अनिवार्य है।

प्रसव से पहले एवं दुग्धकाल आरम्भ होने तक रक्त में इंसुलिन तो कम, परन्तु ग्रोथ हार्मोन की मात्रा अधिक होने लगती है। इसी प्रकार शरीर में थाइरोक्सीन, इस्ट्रोजन, ग्लुकोकोर्टिकोयड तथा प्रोलेक्टिन हार्मोन में भी बदलाव आते हैं जो प्रसवोपरांत धीरे-धीरे सामान्य अवस्था में आने लगते हैं। इन परिवर्तनों के कारण पशु को भूख कम लगती है तथा इनकी खुराक ग्राह्यता बहुत कम हो जाती है। ऐसा होने पर पशु अपने शरीर में जमा की गई वसा रूपी ऊर्जा व जिगर में संग्रहीत ग्लाइकोजन का उपयोग करने लगता है। इसका पशुओं के स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। ज्ञातव्य है कि रक्त में इस्ट्रोजन तथा प्रोजेस्टीरोन के अनुपात में परिवर्तन होने से पशु की शुष्क पदार्थ ग्राह्यता कम हो जाती है।

प्रसव से पहले के संक्रमण-काल में रक्त-शर्करा लगभग सामान्य रहती है, जो प्रसव के समय तीव्रता से बढ़ती है तथा प्रसवोपरांत पुन: धीरे-धीरे कम होने लगती है। ऐसा अधिक मात्रा में ग्लुकागोन व ग्लुकोकोर्टिकोयड हार्मोनों के कारण जिगर में ग्लाइकोजन के अपघटन से होता है। यद्यपि स्तन ऊत्तकों को लेक्टोज संश्लेषण हेतु ग्लूकोज की आवश्यकता प्रसवोपरांत भी रहती है, फिर भी जिगर में ग्लाइकोजन की उतनी अधिक क्षति नहीं होती। यह दुग्ध उत्पादन हेतु अन्य गैर-ग्लाइकोजन स्त्रोतों से ग्लूकोज संश्लेषण होने के कारण सम्भव होता है। स्पष्ट है कि चयापचय सम्बन्धी संक्रमण-काल की सभी बड़ी घटनाएं प्रसवोपरांत ही होती है। यदि इस समय जिगर में ट्राइग्लिसराइड की मात्रा बढ़ जाए तथा ग्लाइकोजन कम हो जाए तो, गायों मे 'कीटोसिस' जैसे चयापचय सम्बन्धी विकार की स्थिति बन जाती है। अत: संक्रमण-काल के दौरान होने वाले तनाव को कम करने के लिए गायों को पहले से ही संतुलित आहार दिया जाना चाहिए। इस अवधि में अधिक ऊर्जा ग्राह्यता सुनिश्चित करने के साथ-साथ सुरक्षित वसा व जिगर में ग्लाइकोजन की क्षति को न्यूनतम रखना होगा। गाभिन पशु में बछड़े की बढ़त एवं विकास को देखते हुए इसे अतिरिक्त ऊर्जा की आवश्यकता पड़ती है। पशु को प्रसवोपरांत चयापचय सम्बन्धी गंभीर विकारों का सामना करना पड़ता है। अत: ऐसी स्थिति से निजात पाने के लिए गाय को 1.5 किलोग्राम प्रतिदिन की दर से अतिरिक्त दाना खिलाया जाना चाहिए।

प्रसव से पूर्व यदि रूक्ष प्रोटीन प्रचुर मात्रा में न दिया जाए तो पशु ऋणात्मक नाइट्रोजन असंतुलन की अवस्था में आ सकते हैं। यदि पोषक आहार उपलब्ध करवाए जाएं तो इन्हें प्रसव के समय कठिनाई नहीं होती। अत: प्रसव से पहले पशुओं में ऐसे कारकों की पहचान करना आवश्यक है जिनके कारण पोषण ग्राह्यता कम होती है। अध्ययनों से ज्ञात हुआ है कि अधिक मोटी या चर्बी चढ़ी गायों को प्रसवोपरांत अपेक्षाकृत कम भूख लगती है। ऐसी गायों में स्वास्थ्य सम्बन्धी समस्याएँ भी अधिक पाई गई हैं। चारे तथा दाने का अनुपात बढ़ाने से प्रसव पूर्व इनकी खुराक बढ़ाई जा सकती है। ऐसा करने से प्रसव पूर्व ही रूमेन में प्रोपियोनेट अम्ल का उत्पादन बढ़ने लगता है। पशुओं की खुराक में रेशा-युक्त पदार्थ अधिक होने से रूमेन में अम्ल अवशोषित करने वाले ऊत्तकों का विकास तीव्रता से होता है। ये उत्तक वाष्पित होने वाले वसीय अम्लों को शीघ्र ही अवशोषित कर लेते हैं। ऐसा होने से रूमेन की अम्लता बढ़ नही पाती तथा अधिक दाना खाने से एसिडोसिस की स्थिति भी टल जाती है। अत: प्रसवोपरांत अधिक लाभ हेतु गायों को प्रसव से पूर्व ही दाना खिलाया जा सकता है। इन परिस्थितियों में जिगर द्वारा अधिक मात्रा मे ग्लूकोज संश्लेषण होने लगता है तथा ग्लाइकोजन की क्षति होने से बच जाती है। प्रोपियोनेट तथा ग्लूकोज दोनों की प्रसव के समय इंसुलिन की मात्रा बढ़ा कर चर्बी व ग्लाकोजन के क्षय को रोकते हैं। इस प्रकार कीटोसिस जैसे विकार होने की आशंका भी कम हो जाती है।

हालांकि दुग्ध-काल के आरम्भ में संपूरक वसा खिलाने से शारीरिक भार में कमी पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता, फिर भी इसके कारण चर्बी से मिलने वाले गैर-एस्टरीकृत वसीय अम्लों की मात्रा बढ़ जाती है। वसा विघटन कारण हो सकता है। वसा खिलाने से गायों के भार में वृद्धि होती है तथा ये धनात्मक ऊर्जा असंतुलन की स्थिति में पहुँच जाती है। आरम्भ में, इन गायों में कम पोषण ग्राह्यता के कारण वसा खिलाने का कोई विशेष प्रभाव देखने को नहीं मिलता। इसी प्रकार प्रसवोपरांत भी अधिक वसा खिलाने से कोई लाभ नहीं होता, क्योंकि उस समय गाय ऋणात्मक ऊर्जा असंतुलन की स्थिति में होती है।

संक्रमण-काल में कम प्रोटीन-युक्त आहार देने से गाय के संग्रहीत ऊर्जा भंडारो का क्षय होता है तथा जनन, दुग्ध काल एवं स्वास्थ्य पर दुष्प्रभाव पड़ता है। प्रचुर मात्रा में प्रोटीन खिलाने से अन्त: स्त्रावी शारीरिक क्रियाएँ सामान्य होती हैं तथा दुग्धावस्था में सुधार होता है। प्राय: देखा गया है कि दूध न देने वाली गायों की पोषण आवश्यकताओं पर कोई विशेष ध्यान नहीं दिया जाता है। अत: यह आवश्यक है कि ब्याँने से पूर्व संक्रमण-काल के दौरान गाय की आहार आवश्यकताओं का निर्धारण किया जाए, ताकि उस समय गर्भ में पल रहे बछड़े को पर्याप्त मात्रा में पोषण मिल सके। गायों की शुष्क पदार्थ ग्राह्यता एवं प्रोटीन की मात्रा बढ़ा कर जनन क्रिया, दुग्धावस्था व स्वास्थ्य में अधिकाधिक सुधारलाया जा सकता है। प्रसव पूर्व शुष्क पदार्थो का पोषण घनत्व तथा ग्राह्यता बढ़ा कर भी प्रसवोपरांत इनकी खुराक को बढ़ाया जा सकता है। गायों की खुराक में पर्याप्त विटामिन-युक्त खनिज मिश्रण भी मिलाना चाहिए ताकि, उन्हें कोई खनिज अल्पता सम्बन्धी विकार न हो सके।

बछड़ी व कटड़ी ही आधुनिक डेरी फार्म की नींव

एन. एस. सिरोही एवं खजान सिंह

गांव में पशुपालक (अधिकतर) जैसे ही छ: मास की आयु की (बछड़ी/कटड़ी) हो जाए उसे दूध आदि पर निर्भर रखना छोड़ देता है, इनको पूरा स्वच्छ एवं ताजा आहार नहीं देता है और दूसरे पशुओं का बचा हुआ आहार देता है। जिससे उस उम्र में इसकी बढोत्तरी कम होती है और इस श्रेणी के बछड़े और बछड़ी अपनी वयस्क अवस्था में देर से पहुंचने हैं एवं मादकता के कम लक्षण दर्शाते हैं। मादा पशु, जिसमें अनुवांशकीय दोष नहीं है (विशेषकर जनन अंग दोष जैसा कि डिम्बनली का बन्द होना, एक गर्भाशय या बच्चेदानी का न होना आदि) अपने जीवन काल में बच्चा पैदा करने के साथ साथ दूध देने में सक्षम होती है। मादा पशु से प्राप्त मादा बच्चे ही आधुनिक डेरी फार्म की नींव है। इसलिए पशुपालक को निम्न बातें अपनानी चाहिए: -

1. मादा पशु का उसके गर्भकाल के अन्तिम दो मास में, (वातावरण की दशानुसार) उचित पालन पोषण करना चाहिए क्योंकि इस काल में दिया गया आहार उसके अन्दर जीवित बच्चे के स्वास्थ्य एवं बढ़ोत्तरी में सहायक होता है और पशुपालक को भी एक स्वस्थ तथा उचित शारीरिक भार वाला बच्चा मिलेगा।

2. नवजात बच्चे के जीवन के प्रथम तीन महीने बहुत ही महत्वपूर्ण होते हैं क्योंकि इस काल में अधिकतर छोटे बच्चें रोगग्रस्त होते हैं और मृत्यु दर अधिक होती है। रोग ग्रस्त बच्चे के ठीक होने के बाद भी उसकी शारीरिक वृद्धि नहीं होती है। इसलिए इस काल में नवजात बच्चे को उसके भार के अनुसार खीस पिलाएं तथा नाभि नली का उचित उपचार करें। जिससे नवजात बच्चे को पेट विकार, नाभि रोग एवं इससे सम्बन्धित अन्य रोग, न लगें।

3. नवजात बछड़े की शारीरिक बढ़ोत्तरी के लिए अधिक मात्रा में प्रोटीन तथा खनिज लवण भी देने चाहिए। प्रत्येक बढ़ोत्तरी करने वाले बछड़ी/कटड़ी का औसत शारीरिक भार वृद्धि 400-500 ग्राम प्रतिदिन होनी चाहिए। तब ही सही समय पर ये बछड़ी/कटड़ी अपने यौवन तथा परिपक्व दशा में पहुंचकर (270 किलोग्रा भार) गर्भधारण करने योग्य होगी। इसलिए पशुपालक को चाहिए कि वह अपने बढोत्तरी कर रहे बछड़ी/कटड़ी को संतुलित आहार के साथ-साथ उसको कम से कम एक कि.ग्रा. दाना (संतुलित) अवश्य खिलाएं। इससे इनकी बढ़ोत्तरी अच्छी होगी एवं पाईका रोग (मिट्टी आदि का खाना) नहीं होगा।

4. प्रत्येक बछड़ी/कटड़ी को समय लिए संक्रामक रोगों से बचाव के टीकाकरण एवं परजीवियों की रोकथाम हेतु दवाईयां देनी चाहिए, जिससे इस उम्र में शारीरिक वृद्धि ठीक हो सके।

5. वातावरण की दशा के अनुसार बछड़ी/कटड़ी का सही आवास एवं प्रबन्धन होना चाहिए, जिससे उसे किसी प्रकार से कुप्रभाव नहीं पड़ सके।

6. शारीरिक रूप से युवा एवं परिपक्वता में मादकता होने पर लक्षण को जॉचकर, गर्भाधान कराना चाहिए। यदि पशुपालक को बछड़ी/कटड़ी में किसी प्रकार का जननअंगीय दोष का पता लगे, इसका उपचार कुशल पशुचिकित्सक द्वारा कराएं।

परिपक्व बछड़ी/कटड़ीयॉ यदि प्राकृतिक तौर पर गर्भधारण नहीं करती हैं तो उनका पशु चिकित्सक विशेषज्ञ द्वारा परीक्षण करवाएं तथा प्रजनन की आधुनिक तकनीकियां अपनाकर गाभिन कराएं।

दुग्ध-ज्वर:

रचना शर्मा[1] एवं श्रुति[2]

दुग्ध-ज्वर एक चयापचय संबंधी रोग है, जो गाय या भैंस में ब्यॉने से कुछ समय पूर्व अथवा बाद में होता है। इससे पशु के शरीर में कैल्शियम की कमी हो जाती है। मांसपेशियाँ कमजोर हो जाती है। शरीर में रक्त का दौरा काफी कम व धीमी गति से होता है। अन्त में, पशु सुस्त और बेहोश हो कर निढाल पड़ जाता है। पशु एक तरफ पेट और गर्दन मोड़ कर बैठा रहता है। इसमें पशु के शरीर का तापमान सामान्य से कम होता है तथा शरीर ठंडा पड़ जाता है, हालांकि इसे फिर भी दुग्ध-ज्वर ही कहा जाता है।

सामान्य रूप से गाय-भैंस में सीरम कैल्शियम स्तर 10 मिलीग्राम प्रति डेसी-लीटर होता है। जब कि कैल्शियम स्तर 7 मिलीग्राम प्रति 100 मि.लि. से कम हो जाता है तो दुग्ध ज्वर के लक्षण प्रकट होने लगते हैं। दुग्ध ज्वर अधिक दूध देने वाली गायों व भैसों में 6 से 11 वर्ष की उम्र में तीसरे से सातवें ब्यांत में अधिक होता है।

यह रक्त में कैल्शियम की कमी के कारण होता है। ब्यांत के समय मुख्यत: तीन कारणों से रक्त में कैल्शियम की कमी होती है :

1. ब्यॉने के बाद कोलोस्ट्रम के साथ बहुत सारा कैल्शियम शरीर से बाहर आ जाता है। कोलस्ट्रम में रक्त से 12-13 गुना अधिक कैल्शियम होता है।

2. ब्यॉने के बाद अचानक कोलस्ट्रम निकल जाने के बाद हड्डियों से शरीर को तुरंत कैल्शियम नही मिल पाता है।

3. ब्यॉने के बाद यदि पशु को कम आहार दिया जाए तो अमाशय व आंत अपेक्षाकृत कम सक्रिय होने से कैल्शियम का अवशोषण काफी कम होता है।

शरीर में मांसपेशियो में सामान्य तनाव बनाए रखने के लिए रक्त में कैल्शियम व मैग्नेशियम का अनुपात 6:1 होना चाहिए, कैल्शियम तनाव को बढाता है। जबकि मेग्नेशियम तनाव को घटाता है। रक्त में कैल्शियम-मेग्नेशियम के सामान्य अनुपात में बदलाव आते ही निम्न स्थितियां हो सकती हैं।

1. कैल्शियम कम + मैग्नेशियम ज्यादा = लकवा व नशे की हालत।

2. कैल्शिम कम + मैग्नेशियम कम = चारों पैरों में टिटनेस जैसे लक्षण, पेशी स्फुरण के साथ बेहोशी और ऐंठन

3. कैल्शियम कम + मेग्नेशियम सामान्य = अधिकतर समय पशु बैठा रहता है। आसानी से खड़ा नहीं हो पाता है। अंत में कोमा जैसी स्थिति हो जाती है।

लक्षण:

दुग्ध ज्वर के लक्षणों को तीन अवस्थाओं में बांटा गया है :

1. प्रथम अवस्था: यह ब्यॉने से पहले की उत्तेजित अवस्था है, जिसके लक्षण निम्नलिखित है।

- अधिक संवेदनशीलता, उत्तेजना, टेटनस जैसे लक्षण,
- चारा-दाना नहीं खाना।
- सिर को इधर-उधर हिलाना
- जीभ बाहर निकालना और दांत किटकिटाना
- तापमान सामान्य से थोड़ा बढ़ा हुआ
- शरीर में अकड़न, पिछले पैरों में अकडन, आंशिक लकवा जिसके कारण पशु गिर जाता है।

2. **द्वितिय अवस्था:** इसमें पशु गर्दन मोड़कर बैठ जाता है तथा इसे उरास्थि पर बैठी हुई अवस्था भी कहते है। इसके लक्षण इस प्रकार है-

- पशु अपनी गर्दन को पार्श्व भाग की ओर मोड़कर निढाल सा बैठा रहता है, पशु खड़ा नहीं हो पाता है।

- शरीर का तापमान सामान्य से कम हो जाता है। जिससे शरीर ठंडा पड जाता है। मुख्यत: पैर ठंडे पड़ते हैं।
- आँखें सूख जाती हैं। आँख की पुतली फैलकर बड़ी हो जाती है। आँखे झपकना बंद हो जाता है।
- प्रथम अमाशय की गति काफी कम हो जाती हैं जिससे कब्ज होती है।
- गुदा की मांसपेशियों में ढिलाई पड़ जाती है।
- हृदय ध्वनि धीमी हो जाती है, नाड़ी कमजोर हो जाती है, जबकि हृदय गति बढ़ कर 80 प्रति मिनट तक हो जाती है। रक्तचाप कम हो जाता है।

3. **तृतीय अवस्था:** इस अवस्था में पशु लेटा रहता है।

- इसमें पशु बेहोशी की हालत में आ जाता है।
- शरीर का तापमान बहुत ज्यादा कम हो जाता है।
- नाड़ी गति अनुभव नहीं होती तथा हृदय ध्वनि भी सुनाई नहीं पड़ती है। हृदय गति बढकर 120 प्रति मिनट तक पहुँच जाती है।
- पशु के बैठे रहने की वजह से अफारा भी हो जाती है।

उपचार जितना जल्दी हो सके करना चाहिए। इसके लिए पशुचिकित्सक से सम्पर्क करें। क्योंकि यदि पशु एक बार तृतीय अवस्था में पहुँच जाता है तो मांसपेशियों में लकवा हो जाता है।

सम्पादक मण्डल

1. डा. के. पोन्नु शामी (डेरी विस्तार प्रभाग) अध्यक्ष
2. डा. अर्चना वर्मा (डेरी पशु प्रजनन प्रभाग)सदस्य
3. डा. अंजली अग्रवाल (डेरी पशु शरीर क्रिया विज्ञान प्रभाग)सदस्य
4. डा. चन्द्रदत्त (डेरी पशु पोषण प्रभाग)सदस्य
5. डा. सुजीत कुमार झा (डेरी विस्तार प्रभाग)सदस्य
6. श्रीमती ऋतु चक्रवर्ती (डेरी विस्तार प्रभाग)सदस्य
7. डा. ब्रजेन्द्र सिंह मीणा (डेरी विस्तार प्रभाग)सदस्य
8. डा. योगेश खेतरा (डेरी प्रौद्योगिकी प्रभाग)सदस्य
9. डा. प्रवीण कुमार (पशुशाला)सदस्य
10. श्रीमती मृदुला उपाध्याय (डेरी विस्तार प्रभाग)सम्पादिका

बुक – पोस्ट
त्रैमासिक मुद्रित सामग्री

भारतीय समाचार पत्र रजिस्टर के अधीन पंजीकृत संख्या 19637/7

सेवा में,

द्वारा
डेरी विस्तार प्रभाग,
राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान,
करनाल - 132 001 (हरियाणा), भारत

प्रकाशक : डा. अनिल कुमार श्रीवास्तव, निदेशक, रा. डे. अनु. सं., करनाल

रुपरेखा : डा. के. पोन्नु शामी, अध्यक्ष, डेरी विस्तार प्रभाग

सम्पादिका : मृदुला उपाध्याय, मुख्य तकनीकी अधिकारी, डेरी विस्तार प्रभाग

AARON Media 098964 33225

प्रकाशन तिथि : 1.01.2014 **मुद्रित प्रति – 3000**